टूटती सांकले

अंक – 14 | सितंबर–अक्तूबर, 2009 | सहयोग राशि 3/– रुपये

संपादकीय

महिला का व्यक्तित्व सम्मान और विकास

महिला गुलामी का इतिहास जितना पुराना है, उतना ही पुराना है उन सभी कथकंडों का इतिहास, जिनके ज़रिये महिलाओं को उनकी मुक्ति के रास्ते से भटकाया जाता रहा है. कभी देवी बना कर, कभी शुचिता की तख्ती गले में लटका कर महिलाओं को झूठा सम्मान दिया गया है. केवल अपनी सुविधा के अनुसार यह समाज व्यवस्था औरतों को कभी देवी बनाती है, तो कभी डायन और कभी माल बना कर बाज़ार में बेचती है. पारिवारिक ज़िम्मेदारी के नाम पर घरेलू काम–काज को उसके मत्थे मढ़ कर उसके श्रम को लूटती रही है. जैसे–जैसे समय बदलता गया, शोषण के तरीके भी बदलते गये. महिला शोषण के विभिन्न तरीकों में से बलात्कार एक ऐसा तरीका है, जिसके ज़रिये यह पुरुषवादी समाज औरतों पर अपना नियंत्रण बरकरार रखता है. एक पुरुष अपनी श्रेष्ठता को साबित करने के लिए इसका इस्तेमाल करता है, न कि केवल यौन इच्छाओं की पूर्ति के लिए. हाल ही में हुई चंडीगढ़ के नारी निकेतन में बलात्कार के बाद गर्भवती हुई मानसिक रूप से विक्षिप्त युवती के मामले में यही रवैया दिखाई पड़ता है.

इस घटना में, एक विक्षिप्त महिला, जिसके साथ बलात्कार हुआ, जिसके खिलाफ़ हिंसा हुई है, बजाय इसके कि उस दुष्कर्मी को खोज कर उसको सज़ा दी जाये, यह पूरी कानून व्यवस्था उस आदमी को खोज कर पीड़ित महिला के बच्चे को उसका नाम दिये जाने को लेकर चिंतित है. उसे मातृत्व का अधिकार दिलाने के लिए चिंतित है. क्योंकि इस समाज के नज़रिये से चाहे कोई महिला विक्षिप्त हो या स्वस्थ, उसके जीवन का पहला लक्ष्य बच्चे पैदा करना और ज़िंदगी भर उनका पालन–पोषण करना ही है.

इसी के साथ हमारे समाज में बलात्कार के प्रति नज़रिये का प्रश्न भी उठता है. हमारा भारतीय समाज बलात्कार को घृणित दृष्टि से तो ज़रूर देखता है, लेकिन इसलिए नहीं कि वह एक स्वतंत्र अस्तित्व रखनेवाले व्यक्ति के प्रति हिंसा है, बल्कि इसलिए कि इसके कारण एक औरत की शुचिता नष्ट हो जाती है. यही कारण है कि बलात्कार के अपराधी किसी हीन भावना के शिकार नहीं होते, लेकिन शोषित औरतें आत्महत्या तक कर लेती हैं या करने पर विवश कर दी जाती हैं. पीड़िताओं को ही अपने खिलाफ़ हुए अपराध का दोषी ठहराया जाता है. इसके अलावा हमारे समाज का एक दूसरा पहलू यह भी है कि बदला लेने की कार्रवाइयों के रूप में भी बलात्कार का हथियार के बतौर इस्तेमाल किया जाता है. वास्तव में, बलात्कार का पूरा मामला स्त्री की शुचिता पर आकर टिक जाता है. किसी भी स्त्री के सम्मान की कसौटी उसका कौमार्य बन जाता है. अगर हम इस प्रश्न को गहराई से देखें तो हम पायेंगे कि स्त्री की शुचिता का मामला निजी संपत्ति से जुड़ा हुआ है. यदि एक महिला की शुचिता भंग हो जाती है या एक से अधिक पुरुषों के साथ उसके संबंध होते हैं, तो संपत्ति के उत्तराधिकारी की पहचान मुश्किल हो जाती है. इसलिए इस मुनाफ़े और निजी संपत्ति पर टिके समाज में जब स्त्री की शुचिता भंग हो जाती है, तो उसकी उपयोगिता भी नष्ट हो जाती है. स्त्री की एक पितृसत्तात्मक समाज में सबसे बड़ी भूमिका और उपयोगिता संपत्ति के उत्तराधिकारियों को जन्म देना और उनका आजीवन पालन–पोषण करना, परिवार चलाना माना जाता है. इसके अलावा उसकी किसी भूमिका और उसके स्वतंत्र अस्तित्व–उपस्थिति को समाज में स्वीकृति नहीं मिलती. इस तरह हम देखते हैं कि स्त्री के संपूर्ण अस्तित्व का आधार यौनिकता है.

यौन शोषण एक गंभीर अपराध है, पर सिर्फ़ इसलिए नहीं कि ये औरतों के शील व शुचिता से जुड़ा हुआ है, बल्कि इसलिए कि यह समाज में एक स्वतंत्र अस्तित्व रखनेवाली एक जीती–जागती प्राणी की दैहिक स्वतंत्रता का उल्लंघन है, उसके प्रति हिंसा है. उसके जीने के बुनियादी सवाल पर एक प्रश्नचिह्न है. परिस्थितियों के बदल जाने के तमाम दावों के बावज़ूद महिलाओं के सम्मान, उनकी इज्ज़त का सवाल का दारोमदार अब भी उनकी शुचिता पर टिका हुआ है.

हमारे समाज में कौमार्य को एक बड़ी खूबी के रूप में दिखाया जाता है और आज भी शादी के पहले या कुछ नौकरियों के लिए भी लड़कियों की यौन पवित्रता सुनिश्चित की जाती है. इसके लिए कौमार्य जांच तक करायी जाने लगी है. हाल ही में मध्य प्रदेश के शहडोल ज़िले में इस तरह का मामला प्रकाश में आया था.

आज दहेज़ के नाम पर लाखों महिलाएं उत्पीड़न सहती हैं, या मार दी जाती हैं. शादी, दहेज़, संपत्ति और वस्तुओं को प्राप्त करने का तरीका बन गया है, और दुल्हन का इनसान के रूप में कोई वजूद नहीं है. दहेज़ जैसी कुरीतियों की वजह से बड़े पैमाने पर गर्भ में ही बच्चियों को मार दिया जाता है और इन सभी महिला संबंधी उत्पीड़न और अपराधों में कानून उत्पीड़कों का सहायक ही साबित हुआ है.

औरतों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य की जरूरतों के प्रति समाज का नजरिया भी पुरुषवादी है. महिलाओं को शिक्षा और कैरियर संबंधी जो छूटें मिलने लगी हैं, और उनके स्वास्थ्य पर ध्यान देने की बातें हो रही हैं, वे भी इसलिए नहीं हैं कि महिलाओं का एक स्वतंत्र विकास हो सके और उनकी इस स्वतंत्रता को मान्यता मिल गयी है. बल्कि उसके पीछे भी महिलाओं को उत्पादन का एक साधन मानने की सोच ही काम करती है. महिलाओं को यह छूट इसलिए दी जा रही है कि वे आज के दौर में निरंतर हो रही तकनीकी, शैक्षणिक और वैज्ञानिक उन्नति की पृष्ठभूमि में नयी ज़रूरतों के मुताबिक बच्चों का अच्छे से लालन–पालन कर सकें, ताकि वे एक लागातार उग्र होती जा रही स्पर्धा में टिके रह सकें, उसमें पिछड़ न जायें. जरा इन नारों पर ध्यान दीजिए–स्वस्थ मां, स्वस्थ बच्चा. और जब एक लड़का शिक्षित होता है तो सिर्फ़ एक लड़का शिक्षित होता है, लेकिन जब एक लड़की शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है. यहां मां का स्वस्थ रहना अपने आप में कोई ज़रूरी बात नहीं समझी जाती, बल्कि उसका स्वस्थ रहना इसलिए ज़रूरी है, क्योंकि बच्चे का स्वस्थ रहना ज़रूरी है. इसी तरह महिलाओं की शिक्षा अपने आप में कोई ज़रूरी बात नहीं मानी जाती, बल्कि उनका इसलिए शिक्षित रहना ज़रूरी है, ताकि वे बच्चों की शिक्षा में मददगार बन सकें. दूसरी तरफ़, महिलाओं का कामकाजी होना अपने आप में उनकी आज़ादी का प्रतीक बना दिया गया है, लेकिन हम अपने रोज–रोज के घरेलू अनुभवों से जानते हैं, कि एक कामकाजी महिला को काम करने, कौन–सा काम करने और कब तक काम करने की अनुमति भी अपने घर के पुरुष सदस्यों से लेनी पड़ती है. यहां तक कि उसे अपने कमाये हुए पैसे भी अपनी मरज़ी से खर्च करने का अधिकार नहीं होता.

इनसान के रूप में औरत का अस्तित्व, सम्मान एवं विकास स्त्री उत्पीड़न के सभी रूप एवं उनके पीछे मूलभूत कारणों के खिलाफ संघर्ष करके ही हासिल किया जा सकता है. ■

कविता

शुक्रिया कुसुम बाई

शुक्रिया कुसुम बाई
बहुत–बहुत शुक्रिया
जहे किस्मत
तुमने स्वीकारा
कि मेरा हाम थाम कर
थोड़ी दूर मेरे साथ चलोगी
तुम तो जानती ही हो
समर में साथ छोड़
जाते है सब
पिता, पुत्र और भाई (पति और प्रेमी)
और फिर भी चाहते हैं
सुरक्षित रहे सब
घर, परिवार, नौकरी
सुंदरता और मेरा स्वभाव
मैं जानती हूं यह भी
कि मेरे लिए अपना
सब कुछ खुला और बिखरा
छोड़ आती हो रोज़
घर, परिवार, बच्चे.
पहली बार तुम्हारे हाथों में
सौंप कर बेटी को
जान में जान आयी है
कि बची रहेगी
विभिन्न प्रजाति के
चाचा, मामा और भाइयों से
पर डरती हूं इतना कि
पूछ ही नहीं पाती
तुमसे
कि स्कूल से लौट कर
तुम्हारे बेटी कहां और कैसे
जियेगी?
जानती हूं कि यह शुक्रिया
भी इतिहास में दर्ज नहीं होगा
तब तक
जब तक यह तबदील नहीं हो
जाता
तुम्हारे लिए एक घर
तुम्हारी बीमारी के लिए
अस्पताल
बच्चों के लिए झूला घर
और मुक्त नहीं कर देता तुम्हें
दूध और बिस्किट
चुराने जैसे आरोपों से
लेकिन शुरुआत तो हो सकती
है इस शुक्रिया से
कि सच में कुसुम बाई
भीड़ भरे इस घर से
निकलते हुए सिर्फ़
तुम्हारा ही हाथ करता है–
मैं जा रही हूं
हम शाम को फिर मिलेंगे.

सपना चमड़िया

संघर्षशील महिलाओं की गाथा

समाज में मेहनतकशों पर ढाये जानेवाले ज़ुल्मों के खिलाफ़ न जाने कितने लोगों ने आवाज उठायी और आवाज़ उठाने के जुर्म में, लोगों को संगठित करने के ज़ुर्म में उन्हें अपनी जान भी गंवानी पड़ी. ज़ुल्म के खिलाफ़ आवाज़ बुलंद करनेवालों में महिलाएं कभी भी पीछे नहीं रही हैं. पुरुषों के साथ कदम–से–कदम मिला कर इन्होंने एक शोषणविहीन समाज बनाने की लड़ाई में हिस्सा लिया और शहीद हुईं. शासक वर्ग की साजिश के चलते हमारे सामने हमारी किताबों, अखबारों में कभी भी इन शहीदों का ज़िक्र नहीं होता. इत्तेफ़ाकन अगर आया भी तो जनता के दुश्मन के रूप में.

लेकिन मेहनतकश गरीब जनता की खुशहाली के लिए, उनके हक, इज्जत के पक्ष में संघर्ष करनेवालों को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता. 'टूटती सांकलें' इस बार के अंक में आंध्र प्रदेश की कामगार महिलाओं, छात्राओं की चहेती माधवीलता के बारे में जितनी भी जानकारी मिल पायी, उसी को आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा है.

माधवीलता

माधवी का जन्म तेनाली शहर के एक साधारण परिवार में हुआ था. इनसे बड़ी दो बहनों की शादी हो चुकी थी. माधवी की पढ़ाई बारहवीं तक हुई. पिता का देहांत हो जाने से छोटी उम्र से ही परिवार का दायित्व इनके कंधों पर आ पड़ा. फलतः ये लेडीज़ टेलरिंग शाप में काम करने लगीं.

माधवी समाज में कामगारों, महिलाओं की स्थिति को लेकर काफ़ी संवेदनशील थीं. समस्याओं के हल के बारे में हमेशा सोचती थीं. इसी दौरान वे महिला मज़दूरों के हम की लड़ाई लड़नेवाले संगठन से जुड़ीं और पूरी तरह से संगठन में काम करने का निश्चय किया. तेनाली, रेपल्ले क्षेत्रों में महिला समस्याओं को लेकर कई संघर्ष हुए, जिनमें माधवी हमेशा अगुआ कतारों में खड़ी रहती थीं. गुंटूर शहर में महिला कामगारों के बीच में इन्होंने काम किया. तूफ़ान पीड़ितों के लिए राहत कोष इकट्ठा करने में आगे–आगे रहीं और यहां तक कि वितरण में भी अपनी अहम भूमिका निभायी.

माधवी से जब भी कोई उनकी शादी के बारे में बात करता, तो वे तपाक से उत्तर देतीं कि दो साल बाद जब मैं अपने पैरों पर खड़ी हो जाऊंगी, तो शादी कर लूंगी.

शहर में ही नहीं, आदिवासी इलाके में भी महिलाओं को संगठित करने का उत्तरदायित्व माधवी ने अपने कंधों पर लिया. यहीं गरीब आदिवासी जनता के बीच काम कर रहे संगठनकर्ता रामकृष्णा से इन्होंने शादी की. शादी के दस दिन बाद, जब संगठन के लोग जिनमें माधवी और रामकृष्णा भी थे, कृष्णा नदी के चंद्रवंका टीले पर मछुआरों से बातचीत कर रहे थे, इतने में ही पीछे से आयी पुलिस की टुकड़ी ने उन पर गोलियों से हमला कर दिया और ये सभी लोग शहीद हो गये, शहीद हुए सभी साथियों का समाचार आंध्र में बिजली के आघात से कम नहीं था. माधवीलता का अपने बीच से अचानक इस तरह चले जाना गरीब कामगार महिलाओं तथा छात्राओं के लिए असहनीय था. इस घटना से सरकार और पुलिस के प्रति गुस्से की लहर दौड़ गयी.

माधवी आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन जनता के दिलों में उन्होंने अपनी जो जगह बनायी है, वह कभी भुलायी नहीं जा सकेगी. ■

मेरी बात

मेरा नाम पुष्पा है. हम अपने परिवार सहित 1998 से कृष्णा विहार में रह रहे हैं. हमलोग आज से 15 साल पहले दिल्ली आये थे और शहीद नगर में किराये के मकान में रहते थे. हमारे आदमी उस समय साहनी फ़ैक्टरी में काम करते थे और हम भी घर में ठेकेदार द्वारा दिया कुछ थोड़ा–बहुत काम कर लेते थे और पेट काट–काट कर थोड़ा पैसा बचाने के बाद कृष्णा नगर विहार में किस्तों पर 33 गज प्लाट लिये और आज अपने प्लाट पर रह रहे हैं.

आज के समय में मेरे पति विनोद कुमार साव दिल्ली के लालकिला के पास बसों पर चने–छोले बेचते हैं. मैं भी फ़ैक्टरी में काम करती हूं. मेरे दो लड़के रजनीश और विजय और दो लड़कियां प्रीति और सोनी हैं. एक लड़की की शादी कर दी है. एक लड़का और एक लड़की पढ़ने जाते हैं. हम दो लोगों के काम करने के बाद भी हमारे घर–परिवार के खर्च व बच्चों की पढ़ाई नहीं हो पा रही थी. तो बड़ा लड़का अपनी पढ़ाई छोड़ कर काम करने लगा. मेरे पति जो काम करते हैं, उनमें से कुछ रुपये तो उन्हें शराब पीने के लिए चाहिए. वे तो घर के दबाव के कारण कम पीते हैं. अगर उन्हें स्वतंत्र कर दिया जाये, तो एक भी रुपया घर में नहीं देंगे. मैं जो काम करती हूं, उसमें तनख्वाह इतना कम है कि जिसमें घर खर्च भी पूरा नहीं हो पाता है. अभी तक लगभग 5–6 फ़ैक्टरियों में काम कर चुकी हूं. किसी भी फ़ैक्टरी में दो–ढाई हजार से ज्यादा तनख्वाह नहीं है. पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को तनख्वाह कम मिलती है. और ऊपर से मालिकों–सुपरवाइजरों की फ़टकार सुननी पड़ती है. आज हमें पुराना होने के कारण तनख्वाह 2700 रु मिलते हैं. लड़का दो हजार महीना और आदमी 100 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से ले आते हैं. इसके बावजूद खर्च पूरा नहीं होता. महंगाई इतनी बढ़ गयी है, कि घर की जरूरत के सारे सामान में जैसे आग लग गयी है. पहले घर के एक ही सदस्य के काम करने व थोड़ी–बहुत हमारे द्वारा मदद करने के बाद किराये पर रहके, परिवार चलाते हुए 33 गज जमीन भी खरीदे. आज इतना कमाने के बाद भी खर्च पूरा नहीं हो पा रहा है. इन परिस्थितियों का जिम्मेदार कौन है?

इन सभी परिस्थितियों के जिम्मेदार के बारे में हमें 16 नवंबर, 2008 को जंतर मंतर की किसान बचाओ–मज़दूर बचाओ रैली और 8 मार्च को महिला दिवस प्रोग्राम में जाने के बाद पता चला. 16 नवंबर, 2008 को हमारे देश में मज़दूरों–किसानों पर हमारी सरकार द्वारा हो रहे अत्याचार के बारे में पता चला. यह भी पता चला कि बहुत सारे किसान कर्ज होने की वजह से आत्महत्या कर रहे हैं. मज़दूरों की तनख्वाह की सरकारी रेट कुछ है और मिलता कुछ है. हमारे पसीने की कमाई तो मालिक हड़प जाता है.

फ़ैक्टरी के बारे में तो हमें आंखों से देखने को भी मिल रहा है. 8 मार्च, 09, के प्रोग्राम में हमें जानने को मिला कि हम सब महिलाओं का क्या अधिकार होता है. हम सभी महिलाओं का समाज में बहुत महत्व है. और महिलाओं के बिना समाज का पहिया आगे नहीं बढ़ सकता है. इस दिन के प्रोग्राम में जाने के लिए फ़ैक्टरी मालिक छुट्टी नहीं दे रहा था और हमें दीदीलोग से बात करने की बहुत इच्छा थी. इसलिए हम बहाना बना कर छुट्टी मार कर प्रोग्राम में शामिल हुए थे. ये दोनों प्रोग्राम देखने और सुनने के बाद हमें महसूस हुआ कि इन सभी परिस्थितियों की जिम्मेदार सरकार है. और हम सभी महिला–पुरुष व गरीब लोगों को मिल कर सरकार के खिलाफ़ एकजुट होना है.

पुष्पा

काले कानूनों की गिरफ्त में हमारा देश

च्योगंखाम संजित (chonglcham sanjit) 23 जुलाई, 2009 को सुबह अस्पताल में पड़े अपने बीमार चचा के लिए दवाई लाने घर से निकला था. पर जब वह वापस आया–तब तक वह के लाश के रूप में तबदील हो चुका था. शायद आप लोगों के मन में यह सवाल उठ रहा होगा कि यह कैसी कहानी है? जी नहीं, यह न ही कहानी है और न ही किसी नयी फ़िल्म का प्लाट. यह बिल्कुल सच्ची और भयानक सच्ची घटना है, जो कभी भी आप या मेरे साथ घट सकती है. चलिए थोड़ा विस्तार में इस बात को आगे बढ़ाया जाये.
इस 23 जुलाई को मणिपुर के 22 वर्षीय च्योगंखाम संजित को मणिपुर पुलिस कमांडो ने आतंकवादी करार देते हुए फ़र्ज़ी मुठभेड़ में मार गिराया और उसी घटना में 25 वर्षीय रुबीना देवी जो कि पांच महीने की गर्भवती थी, की गोली लगने से रास्ते में ही मौत हो गयी. मणिपुर पुलिस कमांडो का कहना है कि संजित एक खतरनाक आतंकवादी संगठन पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (पीएलए) का एक भूतपूर्व सदस्य था, जिसे पकड़ने के लिए कमांडो ने उसे घेर लिया और इस मौके पर संजित ने मणिपुर पुलिस पर गोली चलायी. अपने बचाव के लिए कमांडो को संजित पर गोली चलानी पड़ी, जिससे मौके पर ही संजित की मौत हो गयी. और दुर्भाग्य से, रुबीना देवी घटनास्थल पर चली गोली की शिकार हो गयीं. (हां, एक जीवन का चले जाना और आनेवाले जीवन को अंदर ही रौंद देना दुर्भाग्य ही तो है)
पुलिसिया तंत्र की यह कहानी काफ़ी दमदार थी, जो कि मीडिया की सहायता से अगले ही दिन हर अखबार में आ गयी. हमारा देश एक और आतंकवादी से मुक्त हुआ. मणिपुर पुलिस तंत्र ने इस कहानी को काफी कुशलतापूर्वक मीडिया की सहायता से (जो कि हमेशा से ही व्यवस्था पोषक रहा है) आगे बढ़ाते हुए ले जा ही रहा था कि इसी बीच दिल को दहला देनेवाली तसवीर पूरे देश के सामने आ गयी.
मणिपुर के ही किसी फ़ोटोग्राफर ने उस तसवीर को खींचा, जो कि आज तक दुनिया के सामने नहीं आया, क्योंकि उसे पता है कि राज्य को उसका पता चलते ही उसे भी जान का खतरा हो सकता है. उस तसवीर से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि किस तरह से मणिपुर पुलिस कमांडो ने शांत दिमाग से संजित को एक भरे बाजार से उठाया और उसकी गोली मार कर हत्या कर दी.
मणिपुर तथा असम में यह फ़र्ज़ी मुठभेड़ का सिलसिला 1958 से चलता आ रहा है. नागरिकों को सुरक्षा देने के नाम पर मणिपुर तथा असम में सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम–1958 (एफ्स्पा) को लागू किया गया था. इस अधिनियम के तहत जूनियर आधिकारी को भी यह अधिकार प्रदान किया गया था कि उसे कोई भी व्यक्ति आतंकवादी या फिर संदेहास्पद लगे तो वह उसे बिना किसी गिरफ़्तारी वारंट के बंदी बना सकता है और तो और उसे मार भी सकता है. शासक वर्ग इस तरह के कानून का हर समय गलत इस्तेमाल की करता आ रहा है. पिछले तीस सालों में एफ्स्पा पूरे उत्तर पूर्व में लागू कर दिया गया है. मणिपुर मे इस कानून के तहत हज़ारों से भी अधिक महिला–पुरुष लापता हैं. महिलाएं बलात्कार की शिकार हुई हैं. 2004 में 32 वर्षीया मनोरमा को असम राइफ़ल्स ने रात के अंधेरे में उसे उसके घर से उठा कर उसका बलात्कार किया और फिर उसे आतंकवादी करार देकर उसकी हत्या कर डाली. उस घटना के बाद मणिपुर के निवासी, खास तौर पर महिलाएं रास्ते पर उतर आयीं. बुज़ुर्ग महिलाएं नग्न हो कर भारतीय सेना का विरोध करते हुए आंदोलन पर उतर आयीं, जिसने कि राज्य सरकार तथा केंद्र सरकार दोनों को ही असुविधा में डाल दिया. इस आंदोलन की जानकारी पूरे देश में फ़ैल न पाये, इसके लिए राज्य ने पूरे मीडिया को ही अपने अधीन कर लिया. इस काले कानून की दहशतगर्दी का आलम यह है कि 2009 में अब तक 300 लोग लापता हैं. मानवाधिकार की रिपोर्ट के बावजूद किसी भी आर्मी अफ़सर को अब तक सज़ा नहीं हुई है. इस कातिल कानून (एफ्स्पा) को हटाने के लिए मणिपुर की कवियत्री इरोम शर्मिला आमरण अनशन पर बैठी है.
जम्मू–कश्मीर में नागरिकों की सुरक्षा के नाम पर जम्मू–कश्मीर पब्लिक सेफ़्टी एक्ट 1978 से लागू किया गया. इस एक्ट के नाम से यह पता चलता है कि यह नागरिकों को पूरी सुरक्षा प्रदान करेगा, लेकिन जम्मू–कश्मीर में सालों–साल से आम जन पर चला आ रहा दमन यह दर्शाता है कि यह कानून आम आदमियों का कितना रखवाला है. इस आंदोलन में कश्मीर के नौजवान, महिलाएं, बूढ़े सभी शामिल थे. इस आंदोलन को कुचलने के लिए ज्यादा से ज्यादा सेना तैनात की गयी, तब से लेकर आज तक जम्मू–कश्मीर में लापता लोगों की संख्या दस हज़ार से भी अधिक है. पुलिस तथा मिलिटरी के हाथों कम से कम चालीस से साठ हज़ार निर्दोष लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी. आधी विधवा यानी अपने लापता पति के इंतज़ार में जी रही महिलाओं की संख्या दो से चार हज़ार तक पहुंच चुकी है. इस पब्लिक सेफ़्टी एक्ट (सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियम) के तहत राज्य लोगों को सिर्फ़ शक के आधार पर ही आतंकवादी करार करता है और बिना किसी सबूत के उसे मार दिया जाता है. सालों साल से यह सिलसिला चलता आ रहा है. कश्मीर की आम जनता अपने आज़ाद राष्ट्र की मांग नहीं कर सकती, पर सच तो यह है कि आम आदमी के ऊपर दमनात्मक कार्रवाई आम आदमी के हौसले को दबा नहीं पाया. यह लड़ाई अभी भी जोर–शोर से चल रही है. इस लड़ाई के चलते 19 साल में पहली बार जम्मू–कश्मीर के सोपरन ज़िले से सेना हटायी गयी. यह जीत की एक नींव है.
छत्तीसगढ़ भारत के बहुत सारे गरीब राज्यों में से एक है. वहां के आदिवासियों को न ही खाने के लिए अनाज है, न ही पहनने के लिए कपड़ा. आदिवासियों ने जैसे ही अपने हक के लिए अपनी आवाज़ उठायी. राज्य ने उन्हें माओवादी करार देते हुए उस आवाज़ को दबाने के लिए जनसुरक्षा अधिनियम लागू किया, पिछले दो सालों से इस अधिनियम के तहत बिना किसी सबूत के लोगों को बंदी बनाया जाता है. इसके एक बड़े उदाहरण डा विनायक सेन हैं, जिन्हें छत्तीसगढ़ सरकार ने माओवादी करार देते हुए बिना किसी सबूत के दो साल तक बंदी बनाये रखा. विनायक से अपनी पूरी ज़िंदगी छत्तीसगढ़ के आदिवासियों की निशुल्क चिकित्सा करते आ रहे थे, अपने बलबूते पर गांव में अस्पताल चला रहे थे, उस व्यक्ति को माओवादी करार देते हुए दो साल तक सलाखों के पीछे कैद करके रखा गया, जिसकी रिहाई के लिए ब्रिटिश संसद के 20 सांसदों तथा पूरे विश्व के अनेक नोबेल पुरस्कार विजेताओं ने अपील की और उन्हें जल्द रिहा करने की मांग की. कुछ ही दिन पहले उन्हें रिहा किया गया. माओवादी दमन के नाम पर सलवा जुडूम के ज़रिये लाखों लाख बेकसूर आदिवासियों को बेघर किया जा रहा है. महिलाओं पर शारीरिक उत्पीड़न तथा बलात्कार ज़ारी है.
हमारे देश में हर जगह कमोबेश इसी तरह का काला कानून ज़ारी है. आपको अपने हक के लिए लड़ना मना है. अगर आप अपनी आवाज़ उठायें तो आपको कुचल दिया जायेगा जैसे कि बंगाल में लालगढ़–नंदीग्राम–सिंगूर के आदिवासियों का सरकार कैसे क्रूरता पूर्वक दमन करने का प्रयास करती आ रही है. इसी तरह सिर्फ़ के आधार पर दिल्ली के बाटला हाउस की घटना जिसमें चार मुसलमान नौजवानों को किस तरह से बिना किसी सबूत के आतंकवादी करार करते हुए मार गिराया गया था. 2001 में संसद पर हमला हुआ, जिसमें बिना किसी सबूत के आधार पर कश्मीर के अफ़ज़ल गुरु को फ़ांसी की सज़ा सुनायी गयी, और तो और उसके बचाव पक्ष में सही वकील तक नहीं मुहैया किया गया.
काले कानून हमारे और आपके पीछे छाया की तरह घूम रहे हैं. आप जब भी शोषण के खिलाफ़ आवाज़ उठायेंगे, आप पर वार हो सकता है. तो क्या आप अपनी आवाज़ को दबा कर रखेंगे? हम सब को इस ज्वलंत सवाल पर विचार करना होगा.

सुचित्रा

खाप पंचायतों का तालिबानी चेहरा

ग्रामीण हरियाणा खाप पंचायतों के तालिबानी फ़रमानों की वजह से हमेशा से सुर्खियों में बना रहा है. हाल ही में हरियाणा में दो घटनाएं घटीं, जिनसे खाप पंचायतों के बर्बर रवैये के प्रति बुद्धिजीवी वर्ग में एक बार फिर से बहस तेज हो गयी है. पहली घटना जींद ज़िले के नरवाना के मटौर गांव निवासी वेदपाल की पुलिस की मौजूदगी में पीट–पीट कर उस समय हत्या करना, जब वह अपनी पत्नी सोनिया को पास ही के गांव सिंहवाल से लेने के लिए गया था. उसके साथ गये हाइकोर्ट के वारंट अफ़सर, सदर थाना प्रभारी व अन्य कई पुलिसकर्मियों को भाग कर अपनी जान बचानी पड़ी. मामला प्रेम विवाह व वर्जित गांव में शादी का था.

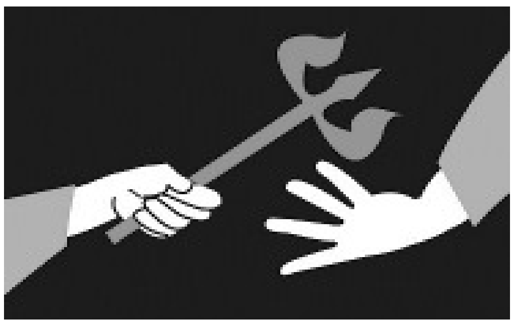

दूसरी घटना झज्जर ज़िले के ढराणा गांव के रविंद्र सिंह गहलोत व पानीपत के सिवाग गांव की शिल्पा की शादी से उत्पन्न विवाद है. विवाद उस समय उत्पन्न हुआ, जब दोनों के गोत्र का खुलासा हुआ. कादियान खाप ने इस परिवार को गांव छोड़ने का फ़रमान सुना दिया. इसी दौरान रविंद्र ने ज़हरीला पदार्थ खाकर जान देने की कोशिश की. मामला बिगड़ता देख प्रशासन ने हस्तक्षेप कर गांव को सुरक्षा के मद्देनज़र छावनी में बदल दिया. खाप ने इसे अपना अपमान समझा तथा जब वे गहलोत परिवार को गांव से निकालने में सफ़ल नहीं हो पायी है, तो उसने पुलिसकर्मियों व मीडियाकर्मियों के साथ भी मारपीट की. इस मामले को सुलझाने के लिए 55 खापों के प्रतिनिधियों ने नौ अगस्त को सर्व खाप महापंचायत बिठायी, जिसमें दिल्ली, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश की खापों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित थे. इसमें लिये गये फ़ैसले के अनुसार रविंद्र और शिल्पा के गांव में घुसने पर आजीवन पाबंदी लगा दी गयी. वहीं रविंद्र के पिता को भी तीन माह के लिए गांव छोड़ कर चले जाने का आदेश दिया गया. साथ ही रविंद्र के दोनों चाचाओं और शिल्पा के परिजनों पर एक–एक कोड़ी का जुर्माना लगाया गया. इस सर्व खाप महापंचायत में उन्माद का आलम यह था कि **शेष अगले पेज पर...**

रविंद्र के मामा की मंच पर ही लात–घूंसों से पीट–पीट कर लहू–लुहान कर दिया. इस पूरे मामले के दौरान पुलिस प्रशासन मूक दर्शक बना तमाशा देखता रहा और गहलोत परिवार को इस फ़ैसले को स्वीकार करना पड़ा.

इसी महापंचायत में मौजूद अखिल भारतीय जाट महासभा के महासचिव युद्धवीर सिंह ने तो सरकार को धमकी देते हुए यहां तक कह दिया कि हिंदू मैरिज एक्ट में संशोधन किया जाये. जब तक इस एक्ट में संशोधन नहीं होगा, तब तक इसी तरह युवक–युवतियों की मौत होती रहेगी और लाखों भाई जेल में सड़ते रहेंगे.

हैरत इस बात की है कि जिन कानूनी संस्थाओं से बड़े–बड़े अधिकारी तथा नेता भय खाते हैं. उनसे इन खाप पंचायतों को कोई डर नहीं है. इनके लिए ये संस्थाएं एक कानूनी ढांचा मात्र हैं. इसकी वजह यह है कि पुलिस प्रशासन से लेकर राजनीतिक नेतृत्व तक इन जाति पंचायतों की वैधता पर कोई सवाल नहीं उठाता. एक और वजह वोटों की राजनीति है. वोटों के कारण कोई राजनीतिक दल इन पंचायतों की मध्ययुगीन प्रवृत्तियों की आलोचना नहीं करना चाहता. इसके अलावा राजकीय संस्थान खुद ही जातिगत और पितृसत्तात्मक मूल्यों से इस कदर ग्रस्त हैं कि वे प्रेम विवाहों के विरोध और उनको रोकने में एक सक्रिय भूमिका निभाने लगते हैं.

पिछले कुछ वर्षों में इन खाप पंचायतों के तालिबानी फ़रमानों में अपेक्षाकृत ज्यादा बढोत्तरी देखी गयी है. इसका मुख्य कारण युवा पीढ़ी द्वारा जाति और गोत्र के बंधनों को तोड़ कर परिणय सूत्र में बंधने की घटनाओं का बढ़ना है. इन खाप पंचायतों को अपना सामाजिक वर्चस्व टूटता नज़र आने लगा है तथा इन्हें अपने अस्तित्व की चिंता सताने लगी है. केवल पुरुषों की मौजूदगी में होनेवाली इन पंचायतों की बैठकों में जाति की दुहाई देकर और पितृसत्तात्मक भावनाओं को भड़का कर जाति विशेष को आसानी से गोलबंद कर लिया जाता है. जब इन पंचायतों का गुस्सा उन लोगों पर केंद्रित होता है, जो उनके प्रभुत्व को चुनौती देते दिखाई पड़ते हैं, तो इनकी ताकत भयानक और बर्बर हो जाती है. दलितों, महिलाओं या युवा जोड़ों पर इस ताकत की आजमाइश अक्सर देखी जा सकती है. कोई भी जाति या गोत्र समुदाय, दूसरे समुदाय के खिलाफ़ कितनी हिंसा कर सकता है, यह बात उसकी आबादी, राज्य के संस्थानों में उसकी पहुंच और चुनावी राजनीति में उसकी अहमियत आदि पहलुओं से तय होता है. यदि इन खाप पंचायतों के तालिबानी फ़रमानों की जड़ में झांक कर देखें तो इसका सबसे मुख्य कारण है कि संपत्ति का एक जाति से दूसरी जाति में स्थानांतरण को रोका जा सके. दूसरा मुख्य कारण मौजूदा जाति व गोत्र व्यवस्था को ज्यों का त्यों बनाये रखना है. गोत्र व्यवस्था में मां, दादी, नानी व पिता के गोत्र में विवाह की मनाही होती है. इन चारों गोत्रों के व्यक्ति आपस में भाई–बहन माने जाते हैं, भले ही उनके परिवारों का आपस में कई सौ पीढ़ियों का अंतर हो. इस तरह न केवल जाति समूह को आगे बढ़ाने में मदद मिलती है, बल्कि इससे समुदाय के पुरुषों का युवाओं पर नियंत्रण भी और मज़बूत होता है.

निष्कर्षतः आदिमकाल की कबीलाई व्यवस्था के तर्ज़ पर गठित खाप पंचायतें आज भी उसी पुरानी सामंती व्यवस्था को बनाये रखना चाहती हैं. ये पंचायतें जो ऐतिहासिक फ़ैसले सुना रही हैं, वे पूर्णतया गैर जनवादी, अन्यायपूर्ण और किसी भी सभ्य समाज के माथे पर कलंक की तरह हैं. खाप पंचायतों के अमानवीय रवैये से लड़ने के लिए जन जागरूकता, राजनीतिक इच्छाशक्ति और सामाजिक संगठनों की पहलकदमी की ज़रूरत है.

सीमा

सास का बहू को लात मारना क्रूरता नहीं : सुप्रीम कोर्ट

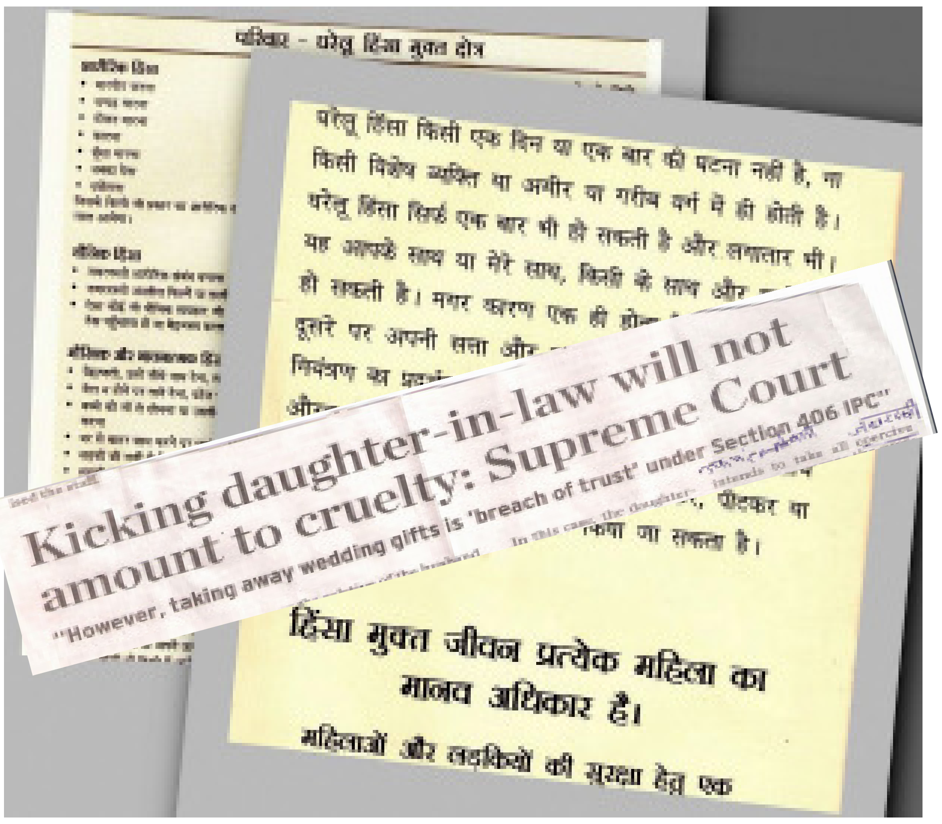

परिवार - घरेलू हिंसा मुक्त क्षेत्र

घरेलू हिंसा किसी एक दिन या एक बार की घटना नहीं है, ना किसी विशेष व्यक्ति या अमीर या गरीब वर्ग में ही होती है। घरेलू हिंसा सिर्फ एक बार भी हो सकती है और लगातार भी। यह आपके साथ या मेरे साथ, किसी के साथ और ... हो सकती है। मगर कारण एक ही हो... दूसरे पर अपनी सत्ता और ... नियंत्रण का ...

Kicking daughter-in-law will not amount to cruelty: Supreme Court

"However, taking away wedding gifts is 'breach of trust' under Section 406 IPC"

हिंसा मुक्त जीवन प्रत्येक महिला का मानव अधिकार है।

महिलाओं और लड़कियों की सुरक्षा हेतु एक

अभी कुछ दिनों पहले सुप्रीम कोर्ट का यह फ़ैसला कि सास का बहू को लात मारना या तलाक / छोड़ देने की धमकी देना क्रूरता नहीं है, सचमुच चौंकानेवाला है. क्योंकि इसके पहले *घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण विधेयक, 2005* के अंतर्गत पीड़ित महिला के अधिकारों की जानकारी के लिए जगह–जगह सेमिनार हुए होर्डिंग्स लगे और भी न जाने कितने तरह के प्रचार के तरीके अपनाये गये. इसमें साफ़–साफ़ लिखा हुआ है कि मारपीट करना, थप्पड़ मारना, ठोकर मारना, काटना, घूंसा मारना, धक्का देना, धकेलना शारीरिक हिंसा के तहत आयेंगे और बेइज़्ज़ती, ताने देना, मौखिक, भावनात्मक हिंसा के तहत आयेंगे.

लेकिन सुप्रीम कोर्ट के न्यायमूर्ति एसबी सिन्हा और सिरायिक जोसेफ़ की खंडपीठ ने भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत 498–ए क्रूरता और 406 विश्वास के साथ खिलवाड़ पर अपना जो फ़ैसला सुनाया है, वह हैरत में डाल देनेवाला है.

मोनिका शर्मा ने अपने पति विकास शर्मा, ससुर भाष्कर और सास विमला पर आरोप लगाया था कि ये उसके साथ क्रूरता से पेश आये और विश्वास के साथ खिलवाड़ किया. पटियाला कोर्ट ने पति, सास, ससुर के खिलाफ़ सम्मन ज़ारी किया. दिल्ली हाइकोर्ट ने इस सम्मन को खारिज़ कर दिया. इसके बाद मोनिका ने सुप्रीम कोर्ट में अपील की और यहां यह फ़ैसला सुनाया गया कि *किसी महिला द्वारा अपने पुत्रवधू को लात मारना और तलाक की धमकी देना भारतीय दंड संहिता की धारा 498–ए के अंतर्गत क्रूरता में नहीं आता है.*

आश्चर्य की बात यह है कि सुप्रीम कोर्ट के इस महिला विरोधी फ़ैसले पर इक्के–दुक्के लोगों को छोड़ कर किसी ने अपनी राय तक व्यक्त नहीं की. उन्होंने भी नहीं, जो घरेलू हिंसा संरक्षण विधेयक–2005 के ज़रिये महिलाओं के लिए हिंसामुक्त समाज का ढिंढोरा पीट रहे हैं. जबकि सर्वोच्च न्यायालय ने अपना यह फ़ैसला सुना कर महिलाओं पर हिंसा को जायज़ करार दे दिया है. हमारा भारतीय समाज महिलाओं को वैसे भी इनसान का दर्जा नहीं देता और सुप्रीम कोर्ट ने भी अब इस पर अपनी मुहर लगा दी है.

हमें न्याय व्यवस्था के इस दोहरे चरित्र को समझना होगा, जिसमें वह एक तरफ़ हिंसा मुक्त समाज की बात करता है. तो दूसरी तरफ़ घरेलू हिंसा को बढ़ावा देता है. अनगिनत केस ऐसे हैं, जिनमें महिला विरोधी फ़ैसले हुए हैं. महिला सशक्तीकरण का झूठा दावा करनेवाली सरकार का भी इन मामलों में चुप रहना महिलाओं पर हो रही हिंसा का पक्ष लेता है. यह रवैया यह दिखा देता है कि हमारा पितृसत्तात्मक समाज, हमारी सरकार, हमारी न्याय व्यवस्था महिलाओं के प्रति कितनी संवेदनशील है. हमें मिल कर इस तरह के महिला विरोधी फ़ैसले का विरोध करना होगा.

मधु

मृत आत्माएं

लघुकथा

कुछ मृत आत्माएं आपस में मिलीं तो वे अपनी–अपनी बातें कहने लगीं. सबसे पहले एक वृद्ध आत्मा बोली–'मैं अभी और जीना चाहता था. मगर 80 साल की उम्र में ही मौत हो गयी.'

'आप तो 80 साल तक ज़िंदा रह गये. मुझे देखिए, मैं 32 साल की उम्र में ही शहीद हो गया'–तभी एक युवा आत्मा बोली.

'मैं तो किशोरावस्था में ही चल बसी.'

'और मैं बचपन में ही गुज़र गया.'

'अरे, मैं तो पैदा होते ही मर गया.'

'भैया, आप तो पैदा भी हो गये. मुझ अभागी को देखिए. मैं धरती पर आने से पहले ही गर्भ में ही मार डाली गयी. मुझे तो मां की गोद भी नसीब नहीं हुई. क्योंकि मैं एक कन्या थी.' अंत में एक नन्हीं आत्मा बोली और फूट–फूट कर रो पड़ी.

सुनील कुमार सिन्हा. *(हंस, जुलाई, 2009 से साभार)*

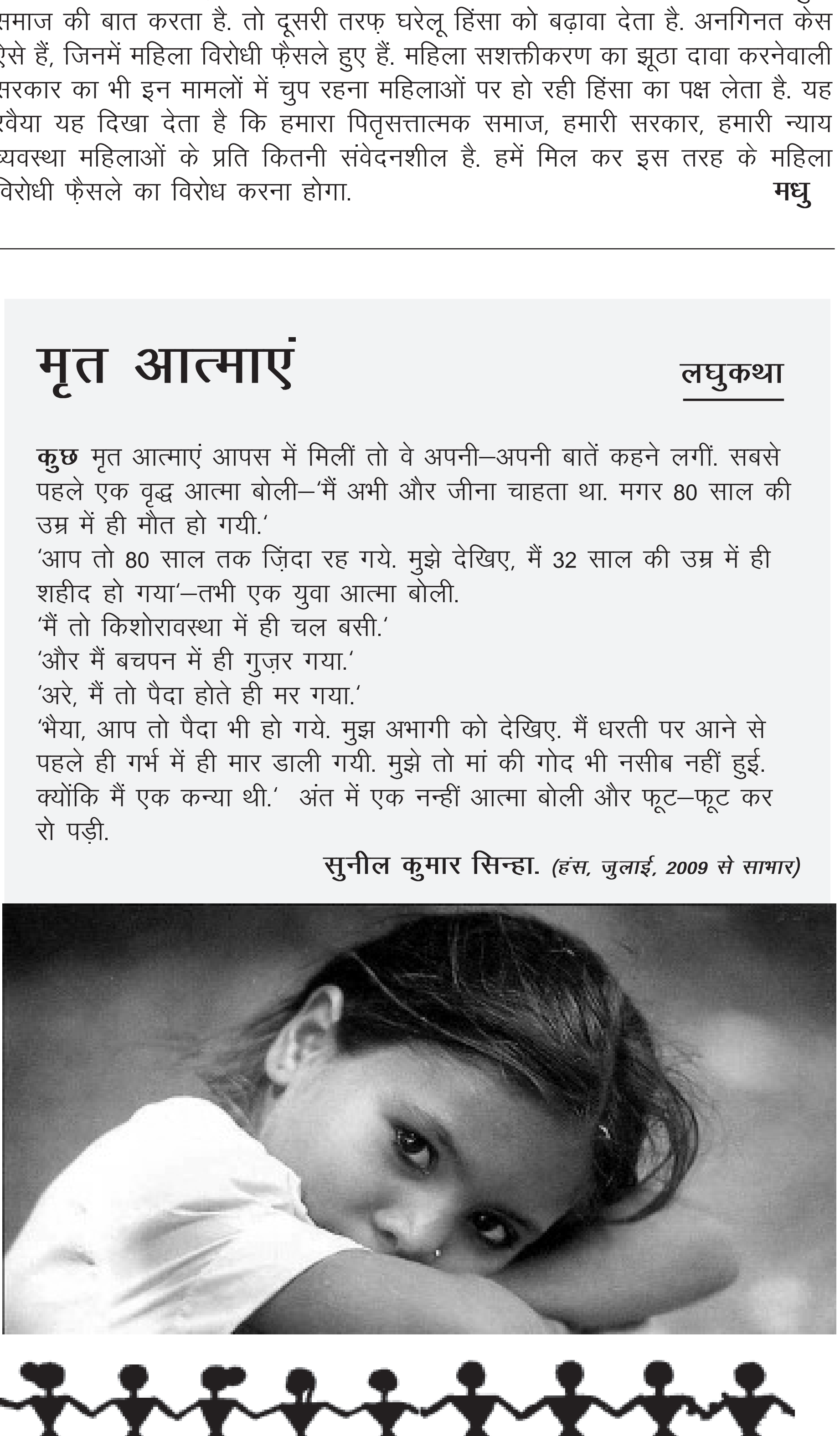

हमारी बस्ती

टूटती सांकलें की पहल उस समय अपने मुकाम के नज़दीक नज़र आती है, जब लोग पत्रिका को पढ़ने के बाद फोन करके, अपने अनुभवों को हमसे बताते हैं. ऐसे में ही एक दिन शाम को रहमान जी का फोन आया–'*टूटती सांकलें* पत्रिका पढ़ कर बहुत अच्छा लगा, आप लोग वाकई तारीफ के काबिल हैं. सर्वे करके इलाकों की जानकारी हम तक पहुंचाना और भी अच्छा काम है. इसी सिलसिले में अगर आप हमारे सीलमपुर इलाके का सर्वे करना चाहें, तो आप आमंत्रित हैं.'

इतने अच्छे रिसपॉन्स से हमें बहुत खुशी हुई. उनकी मदद से ही आज हम आपको पूर्वी दिल्ली के जाने–माने सीलमपुर इलाके के एक छोटे भाग चौहान बांगर की पुलिया से आपको रू–ब–रू करा रहे हैं.

नया सीलमपुर में आने के बाद बाज़ार से होते हुए चौहान बांगर की पुलिया पर जब हमने खड़े होकर आस–पास का नज़ारा देखा, तो हैरानी की सीमा न रही। पुलिया एक बड़े से नाले पर बनी हुई थी, जिसका आधा भाग कूड़े–करकट से घिरे होने के कारण छोटा हो गया था. मुसलिम बहुल इस इलाके में एम. सी. डी. की भूमिका के बारे में रहमान जी ने हमें बताया. महीने में एक बार कूलर का सर्वेक्षण करने जरूर आ जाते हैं, पर मच्छरों को पैदा करनेवाले ढेर कूड़ा–करकट आदि के बारे में सोचना शायद उनका काम नहीं. रहमान जी नेताओं से काफी नाराज़ नज़र आये. इलाके के विकास पर नेताओं का कोई ध्यान नहीं है. उनका कहना था कि शराब की दुकानें धड़ल्ले से खुल रही हैं. अब तक तो गैर–कानूनी रूप से बिकती थी, पर अब कुछ सालों से यहां सरकारी लाइसेंस प्राप्त चार–पांच सरकारी दुकानें खुल चुकी हैं, जिनसे सचमुच शाम के माहौल में असुरक्षा की भावना बढ़ जाती है.

सरकारी स्कूलों और उसमें पढ़ने व पढ़ानेवालों का हाल भी चिंताजनक ही था. इन सब बातों पर चर्चा करने के बाद उनसे अगली बार मिलने का वादा कर हम वहां से विदा हुए.

अगली बार हम रहमान जी से जब मिले तो उन्होंने हमारी मुलाकात अपने कुछ साथियों से शोएब खान जी और समीउद्दीन जी से कराई और उस इलाके का पूरा का पूरा चित्र हमारी आंखों के सामने उतार दिया. उन्होंने बताया कि नाले के बगल में बसी दो हजार झुग्गियां, नालों में पड़ा गंदा कचरा, स्मैक ,अफीम, शराब इत्यादि यहां की असलियत है. गैरकानूनी धंधे कानून जगत की निगरानी में ही होते हैं. इतना ही नही सरकार का चेहरा और भी साफ होता गया, जब उन्होंने बताया कि इन सब धंधों को बनाये रखने के लिए पुलिस और नगर निगमवाले हफ्ता वसूली करते हैं. अपनी बातों में जोड़ते हुए समीउद्दीन जी ने बताया कि गंदगी का इतना बुरा हाल है कि कूड़े के लिए बनाये गये खत्ते में से आधा कूड़ा बाहर ही पड़ा रहता है. नाले के बगल में मीट आदि के टुकड़े पड़े रहने से पूरे इलाके में बदबू फैली रहती है. इस इलाके में कहीं भी कूड़े–दान नही रखे गये हैं.

बातों के दौरान हमने जाना कि उस इलाके की लगभग 250 झुग्गियों में आमतौर पर पुरुष तार छील कर, तांबा, लोहा, कबाड़ आदि जमा कर उसको बेच कर अपना जीवन–यापन करते हैं. साथ ही कुछ लोग गांधीनगर फ़ैक्टरियों में भी काम करने जाते हैं. महिलाएं मुख्यतः घरों में ही हाथ की कढ़ाई, अगरबत्ती बनाने, सिलाई इत्यादि का काम करती हैं. इन्हें राशन की दुकान से राशन मिलता है, लेकिन अधिकतर वो गड़बड़ करके राशन को ब्लैक में बेच देता है. शौचालय के नाम पर टूटी हुई टंकियां, टूटे हुए दरवाज़े, सूखे पड़े नल और जगह–जगह गंदगी ही याद आती है. यहां तक कि एक इतना बड़ा शौचालय आज कूड़ेदान बना हुआ है, इस इलाके से आगे बढ़ने पर सड़क सीवर बनाने के नाम पर खुदी हुई है. सड़कें नज़र आती हैं, बड़े–बड़े गड्ढे, खुले पड़े गटर, बेकार रास्ता और बारिश के समय में ढेर सारा कीचड़ इत्यादि देख कर वहां पैर रखने तक का मन नहीं करता.

समीउद्दीन जी ने यह भी बताया कि बड़ी–सी ज़मीन पर बने बड़े–से सरकारी स्कूल की हालत इतनी बुरी है कि टीचरों के लिए पानी तक उनके मदरसे से मंगाया जाता है. शौचालय की ढंग से व्यवस्था होने से लड़कों को दीवारें कूद–कूद कर उनके यहां आना पड़ता है. इतनी खराब व्यवस्था देख कर हमारे मन में बस ऐसा लगता है कि ये वोट बटोरू नेताओं से सत्ता छीन कर खुद ही व्यवस्था को संभालना पड़ेगा.

इसके बाद हमारी टीम ने वहां के इलाके की झुग्गियों में जाकर महिलाओं से बात की. नाले के साथ बसी इन झुग्गियों में साधारणतः एक–एक मंजिला मकान बने थे, इसके बाद हम गली में घुसते हुए ज़ाहिरा दीदी से मिले. उन्होंने हमें बताया कि उन्हें राशन के लिए कितनी दिक्कत झेलनी पड़ती है. राशन कार्ड में नाम होने के बावजूद उनके मां–भाई के इंतकाल के बाद भी उन्हें राशन कार्ड वापस नहीं दिया गया, यहां तक कि इतने सालों से मिलनेवाले राशन को भी बंद कर दिया गया. इतनी महंगाई के ज़माने में घर चलाने और पेट भरने के लिए मुश्किल हो जाती है. इन्हीं चिंताओं के साथ हमने उनसे विदा ली और आगे बढ़ गये. नाले के बगल में चलते हुए हर घर को देखते हुए चलते रहे. कुछ ही देर में हमने पाया कि एक दीदी कुछ काम (घर में माल का) कर रही हैं. इजाज़त मांग कर हम उनके घर में घुस कर उनके करीब जा बैठे. अपना परिचय देने के बाद उनसे बात करते हुए पता चला कि अकीला दीदी ट्यूबलाइट में लगनेवाली मर्करी तैयार कर रही थीं. इस काम को करते हुए घंटों बैठा रहना पड़ता है, हथौड़ा लेकर पिनों को ठोकना पड़ता है, जिससे पीठ में दर्द के साथ–साथ हाथों के कटने, पीराने, काले पड़ जाने जैसे दर्द झेलने पड़ते हैं. इन सब मुसीबतों को झेलने के बाद सौ मर्करी बनाने पर मात्र दस रुपये ही मिल पाते हैं. पर इतने सालों से काम करते और पैसे की ज़रूरत को समझते हुए, हाथों में काफी तेज़ी लाकर दीदी पूरे दिन में लगभग 50 रुपये कमा ही लेती हैं. उन्होंने ही बताया कि राशन की यहां बहुत दिक्कत है, राशनवाला केवल 20 किलो गेहूं और 5 किलो चीनी देता है. तेल, दाल वगैरह कुछ नहीं मिलता. इस पर भी वह महीने में एक ही दिन (20 तारीख) को दुकान खोलता है, अब जो लेने जाये तो पा जाये, मगर जो नहीं ले जा पाये तो भूल जाये.

शाइनिंग इंडिया, सुपर पावर और विकसित भारत का सपना दिखानेवाली भारतीय सरकार का सच मेहनतकश जनता अच्छी तरह जान रही है. गुजर–बसर के लिए घंटों मेहनत करना, कई बीमारियों के करीब रहना डट कर हर किस्म की मुसीबत का सामना करना, यहीं आम जनता की कहानी है. हरियाली दिल्ली, सुंदर दिल्ली का आंतरिक सच हमारे सामने कई सवाल खड़े करता है. इन्हीं में एक मुख्य सवाल यह भी है कि क्या हम सब अपने अधिकारों, अपनी पहचान और अपने सम्मान को पाने के लिए संगठित करनेवालों की दुनिया नहीं बना सकते?

टूटती सांकलें टीम

उत्पादन के साधनों पर महिलाओं का सचमुच का स्वामित्व या नियंत्रण, मर्दों के साथ बराबरी के स्तर पर सामाजिक उत्पादन में भागीदारी, लैंगिक आधार पर श्रम विभाजन का खात्मा, घरेलू काम को सार्वजनिक कर घर की चाकरी से महिलाओं को मुक्त करना सामाजिक मूलाधार के ये बदलाव ही पितृसत्ता से महिलाओं की सच्ची मुक्ति ला सकते हैं. सामाजिक, आर्थिक आधार में ये बदलाव लाये बिना, उन्हें सार्वजनिक पदों और विधायिका की संस्थाओं में लाया जाये या सांस्कृतिक क्षेत्र में पुराने विचारों, रिवाजों, परंपराओं इत्यादि से चाहे कितना ही संघर्ष करें, और न्याय व्यवस्था में महिलाओं की कैसी ही स्थिति हो, पितृसत्तात्मक उत्पीड़न में कोई बुनियादी बदलाव नहीं होगा. लेकिन परिवार के अंदर रिश्ते, धर्म, शिक्षा, कानून, मीडिया आदि के द्वारा विकसित पितृसत्तात्मक मूल्यों को भी नज़र अंदाज़ नहीं करना चाहिए. क्योंकि ये वैचारिक रूप से भी महिलाओं का शोषण करते हैं. अतः पितृसत्ता के आर्थिक आधार से तो औरतों को लड़ना ही होगा, साथ ही उसके ऊपरी ढांचों यानी सांस्कृतिक व वैचारिक मूल्यों के खिलाफ़ लड़ कर ही भविष्य में महिलाएं पुरुषों की बराबरीवाला, इनसानोंवाला अपना गरिमामय दर्जा पुनः प्राप्त कर सकेंगी.

नेहा

शुरुआत विद्रोह की

आज शिवरात्रि का दिन है. गांव की सभी औरतें पूजा–पाठ करने मंदिर में जा रही हैं. इसलिए रानी और उसकी मां भी नहा–धोकर पूजा करने के लिए मंदिर पहुंच गयीं. जब वे दोनों मंदिर की सीढ़ियां चढ़ने लगीं तो गांव की एक चौधराइन उनको देख कर तिलमिलाते हुए बोलीं–'अरे, रामधन की बहू, तो ये क्या कर रही है. तू अछूत होके गांव के मंदिर के भीतर जा रही है. तेरे में थोड़ी–बहुत अकल है कि नहीं.

रानी और उसकी मां इतना कुछ सुन कर ही मंदिर के बाहर से ही पूजा करके लौट आयीं. अगले दिन जब रानी और उसकी सहेली खेत में बथुआ तोड़ रही थीं, तो वही चौधराइन उन दोनों को देख कर उनके पास आकर बोलीं–'ए छोरियों, थोड़ा–बहुत साग मेरे लिए भी तुड़वा दो.'

कल की बात को याद करके रानी ने तुरंत चौधराइन को जवाब देते हुए कहा–क्या बात है चौधराइन. कल तो तुमने अछूत कह कर हमें मंदिर में नहीं जाने दिया. फिर आज हमारे हाथ का साग कैसे खा लोगी? तब भगवान तुमसे नाराज़ नहीं होगा? ■

औरत

औरत !
वह तुम्हारा ही रक्त है
जो तुम्हारे स्वप्न और पुरुष की उत्कट आकांक्षाओं को
शिशु के रूप में परिवर्तित करता है

औरत
वह भी तुम्हारा ही रक्त है
जो भूख और यातना से संतप्त शिशु में
दूध बन कर जीवन का संचार करता है
और
वह भी तुम्हारा ही रक्त है
जो रसोई घर में स्वेद
और खेत–खलिहानों के दानों में
मोती की तरह दमकता है

फिर भी
इस व्यवस्था में तुम मात्र एक गुलाम
एक दासी हो
जिसके चलते मनुष्य की उद्दंडता की प्राचीर
के पीछे धीरे–धीरे पसरती कालिमा
तुम्हारे व्यक्तित्व को
प्रसूति गृह में धकेल कर
तुम्हें लुप्त करती रहती है

इस दुनिया की हर तरह की खुशियां बिकाऊ हैं
लेकिन तुम जो सहज अमोल आनंदानुभूति
देती हो, वही अंततः तुमको दबोच लेती है
वह जो तुम को
चमेली के फूल अथवा
एक सुंदर साड़ी देकर बहलाता है
वही शुभचिंतक एक दिन उसके बदले में
तुम्हारा पति अर्थात मालिक बन बैठता है

वह जो एक प्यार भरी मुस्कान
अथवा मीठे बोल द्वारा
तुम पर जादू चलाता है
कहने को तो वह तुम्हारा प्रेमी कहलाता है
किंतु जीवन में जो हानि होती है
वह तुम्हारी ही होती है जो लाभ होता है
मर्द का होत है
और इस तरह जीवन के रंगमंच पर
हमेशा तुम्हारे हिस्से में विषाद ही आता है

औरत
इस व्यवस्था में इससे अधिक तुम कुछ और
नहीं हो सकतीं
तुम्हें क्रोध की प्रचंड नीलिमा में
इस व्यवस्था को दहकाना ही होगा
तुम्हें विद्युत की झंझा बन अपने अधिकार के
प्रचंड वेग से कौंधना ही होगा.

क्रांति के मार्ग पर कदम से कदम मिला कर आगे बढ़ो
इस व्यवस्था की आनंदानुभूति की मरीचिका से
मुक्त होकर
एक नयी क्रांतिकारी व्यवस्था के निर्माण के लिए
जो तुम्हारे शक्तिशाली व्यक्तित्व को ढाल सके

जब तक तुम्हारे हृदय में क्रांति के रक्ताभ
सूर्य का उदय नहीं होता
सत्य का दर्शन करना असंभव है.

वरवर राव

अब इंटरनेट पर भी टूटती सांकलें

अब आपका यह अखबार इंटरनेट पर भी उपलब्ध है. टूटती सांकलें का यह अंक और इसके कुछ पुराने अंक भी इस पर पढ़े जा सकते हैं. इसके लिए इस लिंक पर आयें.

http://tootatisankalen-blogspot-com/

हमारी दिशा

किसी भी समाज की मुक्ति की राह को तय करने के लिए यह बुनियादी शर्त है कि उस समाज के अंतरिम चरित्र को सही से समझा जाये, चूंकि समाज की मुक्ति के साथ ही महिला मुक्ति का सवाल भी जुड़ा हुआ है, इसलिए भारत में महिला मुक्ति के सवाल को जानने से पहले भारत के वास्तविक सामाजिक चरित्र को जानना ज़रूरी है.

भारतीय समाज का चरित्र अंगरेजों के आने से पहले सामंती रहा है. वर्तमान समय में ज़मींदारों द्वारा बंटाईदारों और बंधुआ मज़दूरों का जो प्रत्यक्ष शोषण हम देख रहे हैं, ये सामंती आधार का ही नतीज़ा है. आज भी गांव में रहनेवाली 70 प्रतिशत जनता सामंती प्रणाली की कई विशेषताओं जैसे लगान, साहूकारों द्वारा लगाये गये चक्रवृद्धि या मनमाना ब्याज इत्यादि जैसी क्रूर नीतियों से जूझ रही है. इस सामंती आधार को साम्राज्यवादियों ने अपने फ़ायदे के लिए नष्ट न कर के मोटे तौर पर बरकरार रखते हुए पूंजीवाद का अनगढ़ विकास किया और इन दोनों के गठजोड़ से ही आज भारतीय समाज का चरित्र अर्ध सामंती और अर्ध औपनिवेशिक बन गया है. सामंतवाद के कारण महिलाओं का ज़मीन पर मालिकाना अधिकार वास्तव में नहीं है. महिला खेत–मज़दूर को पुरुषों के मुकाबले कम मज़दूरी मिलती है.

गांव में आज महिलाएं सामंती उत्पीड़न को विभिन्न कुरीतियों (पर्दा प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या, कन्या हत्या, दहेज़ प्रथा) के माध्यम से झेल रही हैं. महिलाओं को कभी देवी, दुर्गा, सीता कह कर उन्हें सहनशील, कोमल सुंदरतम होने की सीख देकर मर्यादित किया जाता है, तो कभी साम्राज्यवादी संस्कृति को टीवी इत्यादि के माध्यम से अश्लील विज्ञापन फ़िल्में दिखा कर उपभोग के वस्तु के रूप में परोसा जाता है. यह अनगढ़ पूंजीवाद ने अपने मुनाफ़े को बढ़ाने के लिए घरेलू जंजीरों (सामंती जंज़ीरों) का फ़ायदा उठाते हुए आज महिलाओं के घरों तक भी अपने माल पहुंचा दिये हैं, जिनमें वे बिजली, जगह इत्यादि के खर्चे से तो बचते ही हैं, साथ ही मामूली दामों में काम भी करवा लेते हैं.

देश में जो महिलाएं आज बाहर निकल कर रही हैं, उनकी आय को पुरुषों की आय में केवल सहायक आय की तरह समझा जाता है. काम करके घर आने पर भी घरेलू काम की ज़िम्मेवारी महिलाओं पर ही होती है. इस घरेलू श्रम की सामाजिक श्रम में महत्वपूर्ण भूमिका होते हुए भी कोई मान्यता नहीं मिलती. जब तक महिलाओं के श्रम को और उनके द्वारा किये जा रहे उत्पादन को सामाजिक श्रम और सामाजिक उत्पादन में मान्यता नहीं मिलेगी, तब तक महिलाएं अपमानित और प्रताड़ित की जाती रहेंगीं. तब तक ही वे अपने सम्मान और स्वतंत्र अस्तित्व से वंचित रखी जाती रहेंगीं.

महिला समाज का आधा हिस्सा है. शासक वर्ग ने मज़दूर, किसान, मेहनतकश जनता और इन सब में सम्मिलित महिलाओं के बड़े हिस्से का हमेशा से ही शोषण किया है. इसलिए जब तक मेहनतकश महिलाएं और जनता मिल कर सामंतवाद–साम्राज्यवाद को जड़ से नहीं उखाड़ देते हैं, तब तक महिलाओं की वास्तविक मुक्ति संभव नहीं है.

भारती

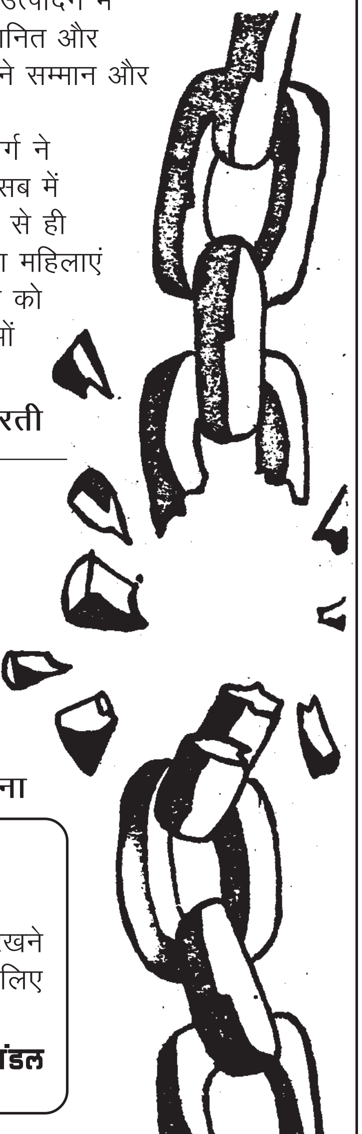

प्रतिक्रियाएं

टूटती सांकले एक बहुत ही अच्छा प्रयास है महिलाओं के बीच अपनी बात ले जाने का और शोषित उत्पीड़ित महिलाओं की बात सार्वजनिक रूप से पहुंचाने का. जब भी 'टूटती सांकलें' अखबार आता है, मैं उसको बिना कोई ब्रेक दिये पढ़ देती हूं. मुझे सबसे ज्यादा खुशी इस बात की है कि दिल्ली जैसे शहर में यह अखबार लगातार निकल रहा है. टूटती सांकलें की पहल बहुत अच्छी है. सही राजनीति जनता में ले जाने की संपादक मंडल की तारीफ वास्तव में होनी चाहिए, क्योंकि सबसे मुख्य जिम्मेदारी उन्हीं की है. यह जारी रहना चाहिए, ऐसी मैं उम्मीद करती हूं.

मीना

पाठकों से

'टूटती सांकलें' के सभी पाठकों की प्रतिक्रियाएं एवं सुझाव आमंत्रित है। 'टूटती सांकलें' संघर्षों की श्रृंखला को याद करते हुए उसे जारी रखने का प्रयास करेगा. 'टूटती सांकलें' समाज में महिलाओं एवं मेहनतकश जनता पर हो रहे अत्याचारों के खिलाफ लड़ने व उनसे एकजुटता बनाने के लिए प्रयत्नशील है. अतः सहर्ष आमंत्रित हैं आपके सुझाव, रचनाएं, अपने क्षेत्र में घटनेवाली महिला सम्बन्धी घटनाएं, संघर्ष की रिपोर्ट आदि।

संपादक मंडल

सम्पर्क सूत्र : **'टूटती सांकलें'** 7/115, सेक्टर – 2, राजेन्द्र नगर, साहिबाबाद, जिला गाजियाबाद – 201005 फोन : 9968701121